

प्रेमावेश और श्रीकुशदर्शन

एक बार श्रीस्वामीजी सत्संग समाजसहित स्नान करने के लिये समुद्र तट पर पधारे । नीली-नीली अनन्त जलराशि को हिलोरें लेते देखकर उनके हृदय समुद्र में भी भाव की लहरियां उठने लगीं । समुद्र की अतल जलराशि जैसे पाताल का स्पर्श करती हैं, वैसे ही श्रीजनक कुमारीजी का पाताल-प्रवेश स्मरण हो आया और अपनी प्यारी माता श्रीसीताजी के विछोह में कुमार लवकुश की व्याकुलता आँखों के सामने प्रत्यक्ष हो गयी । श्रीस्वामीजी ने देखा कि बहुत देरतक खेल खेलने के बाद श्रीलव-कुशकुमार महल में आये । उस समय उन्हें भूख लग आयी थी । अपनी जननी की स्वर्णमयी प्रतिमा को देखते ही उन्हें ऐसा मालूम पड़ा, मानो यह साक्षात् उनकी मां हो । उन्होंने मां का पल्ला पकड़ लिया, मचल मचलकर भोजन मांगने लगे । रोते-रोते उनके नेत्र लाल हो गये । कहने लगे-‘मां ! मां ! हम भूख से व्याकुल हो रहे हैं । अपनी गोदी में बिठाकर, अपने स्नेह से स्निग्ध और करकमलों के स्पर्श से मधुर ग्रास हमारे मुख में डालो । तुम्हारे सिवाय हमारा और कौन है मां ।’ कुछ उत्तर न मिला । उनके ही शब्दों की प्रतिध्वनि उस विशाल मन्दिर में डरावनी मालूम पड़ने लगी । वे गाय से बिछुड़े हुए बछड़ों के समान फफक-फफक कर रोने लगे और अंजलि बाँधकर अपनी स्नेहमयी जननी को मनाने लगे-‘मां ! हमसे क्यों नाराज हो ? हम आपकी आज्ञा के बिना खेलने चले गये और बहुत देर लगाई इसी से नाराज

हो ? माँ ! अब हम फिर कभी ऐसा नहीं करेंगे । हमारी सहज दयालु मैया ! अपने हृदय में अपने नन्हें नन्हें शिशुओं के अपराध न गिनो ! न गिनो ! क्षमा करो ! हम आपके कृपा-प्रसाद वात्सल्य के ही भूखे हैं । अपने स्नेहकन्द, वात्सल्यरज्जु कमल-कोमलकरों से बाँधकर हमें अपने वक्षस्थल में छिपा लो माँ ! हमारे सिरपर अपने अभयदानी करकमलों को फेरो । बोलो माँ ! बोलो !! अपने लवकुश से बोलो ! अपने सुधा पगे वचनों से हमें 'दुलारे ! प्यारे लाड़िले लाला कहकर सम्बोधित करो । तुम्हारे मीठे वचन सनने के लिये हमारे कान कातर हो रहे हैं ।' इस प्रकार कहते हुए दोनों सुकुमार कुमार मातृ-प्रतिमा के चरणों में चिपट गये । 'माँ ! माँ !' को आर्तध्वनि से सारा राजमहल गूँज उठा । उर्मिला आदि देवियां दौड़ आयीं । दोनों लालों को गोदी में लेकर धैर्य-धारण कराने लगीं ।

सचेत होने पर माता के पाताल प्रवेश की घटना स्मृति पट पर अंकित हो गयीं । वे अत्यन्त अधीर होकर पृथ्वी को कुरेदने लगे- 'देवि वसुन्धरे ! तुम तो हमारी माँ की भी माँ हो ! हमारी प्यारी जननी को तुमने कहाँ छिपाया है ? हम बच्चों को क्यों तड़पा रही हो ? हमारा जन्म हुआ बन में, बचपन में पिता के लाड़-प्यार, स्नेह वात्सल्य से वंचित रहे । जब हमारी वह साध पूरी होने पर आयी, तब हम अपनी माता के दुलार से वंचित हो गये । विधाता ने हमारे साथ बड़ा अन्याय किया । हाय ! हाय ! आज हम अपनी माता के करकमलों की छत्रछाया से

दूर हैं ।” इस भाव के उद्रेक से विकल होकर श्रीस्वामीजी ‘माँ !
माँ !’ पुकारने लगे । आँखों से अजस्र अश्रुधारा बहने लगी ।
वे भावावेश में पृथ्वी खोदने लगे और रोते-रोते अचेत हो
गये । उस समय श्रीकुशकुमार प्रत्यक्षरूप से प्रकट हुए । उन्होंने
श्रीस्वामीजी को सचेत किया । वे बोले-“आप इतने अधीर न
हों ! हम तो सदा अपने बाबा और मैया की गोद में बैठे हैं ?
प्रसन्न हैं, सुखी हैं ।” तब कहीं जाकर श्रीस्वामीजी का हृदय
शान्त हुआ ।